णमोकार ग्रन्थ

—जिन-वाणी और आत्म-प्रकाश की मशाल

समीक्षक : श्रीमती नीरा जैन

वर्तमान युग अति भौतिकवादी, बुद्धिवादी, वैज्ञानिक स्तर पर प्रगति के चरम शिखर को छूकर भी मानव का अन्तरतम नहीं छू सका है। आध्यात्मिक विकास और मन की सच्ची शान्ति की खोज में मनुष्य निरन्तर भटक रहा है। सर्वत्र मानव मूल्यों का अवमूल्यन, चरित्र का नैतिक पतन, धर्म में बाह्याडम्बरों और मृत परम्पराओं का समावेश, सामाजिक, राजनैतिक मर्यादाओं का उल्लंघन जैसी संक्रमणशील एवं विघटनकारी परिस्थितियों से मनुष्य को संघर्ष करना पड़ रहा है क्योंकि समस्त मूल्य व आदर्श अपनी अर्थवत्ता खोकर खोखलेपन की गहरी खाई में विलीन होते जा रहे हैं। इतिहास साक्षी है कि जब कभी किसी भी युग में मानवता और धर्म को इस तरह की परिस्थितियों से गुजरना पड़ता है कि उसका अस्तित्व ही संकट में पड़ने लगे तब विश्व स्तर पर मानवता और धर्म, साहित्य और संस्कृति की रक्षा हेतु महान् आत्माओं ने इस पृथ्वी पर कवच स्वरूप जन्म लिया है तथा अपना सम्पूर्ण जीवन मानव जाति के कल्याण में समर्पित कर दिया है—चाहे उन्हें समाज, शासन के विरोध और दैवी प्रकोपों का सामना करना पड़ा, किन्तु उन्होंने अपने कर्तव्य पथ से विचलित हुए बिना धर्म और मानव कल्याण का मार्ग नहीं छोड़ा।

आज सर्वत्र पाशविक और आसुरी वृत्तियों का ताण्डव हो रहा है। लोक रुचि भी भोगाकांक्षी और विषय-लोलुपता एवं द्रव्य-दासता की ओर अग्रसर है, असंयम के कीटाणु व्याप्त हैं। इन स्थितियों में बालब्रह्मचारी, प्रकाण्ड विद्वान, सत्य, अहिंसा और प्रेम का प्रकाश फैलाने वाले दिगम्बराचार्य श्री देशभूषण महाराज जी ने ही अपने सदुपदेशों से भटकी मानवता का मार्ग-दर्शन किया। उन्होंने अपने पावन करकमलों से जैन धर्म के महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों का सम्पादन कर प्रकाशित कराया तथा अन्य भाषाओं में अनुवाद भी किया जिससे जैन धर्म को व्यापक धरातल प्राप्त हुआ। आचार्य श्री संस्कृत, कन्नड़, मराठी, प्राकृत और हिन्दी भाषा के प्रकाण्ड विद्वान् हैं। इनके महत्वपूर्ण ग्रन्थ हैं—भूवलय ग्रन्थ, भावना सार, शास्त्रासार समुच्चय, चौदह गुण स्थान चर्चा, णमोकार मन्त्र कल्प, विवेक मंजूषा, स्तोत्र सार संग्रह, दश लक्षण धर्म, त्रिकाल दर्शी महापुरुष, भगवान महावीर और उनका समय, तात्त्विक विचार आदि। इनका योगदान अविस्मरणीय है।

'णमोकार ग्रन्थ' जैन साहित्य की अनुपम निधि और आचार्य देशभूषण महाराज के दैदीप्यमान प्रतिभा पुंज की एक ऐसी किरण है जिसमें मोहग्रस्त संसारी व्यक्ति के संतप्त मन को मुक्ति पथ का दर्शन होता है। जिस प्रकार सूर्य का प्रकाश कभी लुप्त नहीं होता उसी प्रकार आचार्य जी द्वारा प्रणीत एवं सम्पादित सामग्री सूर्य के प्रकाश की भांति सनातन है, शाश्वत है। इस ग्रन्थ में जैन धर्म के मूलभूत सिद्धान्तों और रत्नत्रय के स्वरूप, जैन तीर्थंकरों से सम्बद्ध कथाओं, तीर्थस्थलों एवं प्रमुख धर्म सूत्रों का रहस्योद्घाटन अत्यन्त सरल भाषा में किया गया है जिसके अध्ययन-मनन से मनुष्य अपनी आत्मा का उद्धार कर सकता है। यह ग्रंथ अपने मूल रूप में खण्डेलवाल जाति के दिल्ली वासी लक्ष्मीचन्द बैनाड़ा द्वारा संवत् १९४६ में संकलित किया गया था किन्तु अप्रकाशित होने के कारण सभी श्रावकों की पहुंच से परे था। इसे पुनः नवीन रूप में संपादित करने का प्रयास स्तुत्य और अभिनन्दनीय है जिसका श्रेय आचार्य श्री देशभूषण जी को है जिन्होंने अनथक परिश्रम और साधना द्वारा इस ग्रन्थ को पुनः संपादित कर प्रकाशित कराया। यह ग्रंथ ढुंढारी और खड़ीबोली मिश्रित भाषा में लिखा गया है किन्तु आचार्य जी ने इस भाषा को परिमार्जित किन्तु सरल रूप देकर सर्वजन सुलभ बना दिया है।

यह ग्रंथ दो अध्यायों में विभक्त है—प्रथम में णमोकार मन्त्र के माहात्म्य और उससे सम्बद्ध पंच परमेष्ठियों का स्वरूप-विवेचन किया गया है तथा दूसरे में रत्नत्रय का वर्णन है। जैन धर्म के इस महत्त्वपूर्ण ग्रंथ द्वारा पतनोन्मुख मानव जाति को आत्मदर्शन द्वारा आत्म-कल्याण की प्रेरणा दी गई है। इसमें जीवोद्धार का मूल कारण जिनधर्म का णमोकार मंत्र माना गया है। इसके नित्य चिन्तन, वन्दन, स्मरण से ही आत्मा सांसारिक दुःखों से मुक्त हो सकती है। यह मंत्र तो इतना चमत्कारी है कि मानव ही क्या अन्य प्राणी जगत् का कोई भी जीव इसके श्रवण मात्र से शान्त भाव से प्राण त्याग कर सद्गति प्राप्त करता है। अनादि काल से रागद्वेष, मोह, कषाय से युक्त होने के कारण जीव जो दुख भोगता रहा है, इंद्रिय भोगविलास द्वारा कर्म बन्धन की शृंखला को जो जटिल बनाता रहा है—इस मन्त्र के प्रभाव से वह इनसे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मुक्त हो जाता है। इसके स्मरण से मनुष्य के शुभ कर्म का उदय होता है जिससे कर्म निर्जरा होकर सभी कार्य निर्विघ्न सम्पन्न होते जाते हैं।

इस अपराजित मंत्र में ३५ अक्षर हैं जिनमें पंच परमेष्ठियों का स्वरूप निहित है, यह पाप विनाशक और मनोकामनापूरक हैं। यद्यपि इस मन्त्र में किसी भी कामना की अभिव्यक्ति नहीं होती, फिर भी आराधक इसे सर्वसिद्धि दाता मानते हैं। मंत्र इस प्रकार है—

'णमो अरिहंताणं, णमोसिद्धाणं, णमो आइरियाणं।
णमो उव्झायाणं, णमो लोए सव्व साहूणं।।

इसमें पांचों परमेष्ठियों को नमन कर उनके स्वरूप का प्रतिपादन किया गया है—प्रस्तुत ग्रंथ में इसका विवेचन विस्तार से किया गया है। मंत्र शास्त्र की दृष्टि से प्रस्तुत मंत्र विश्व के समस्त मंत्रों में अलौकिक है जो पाप विनाशक तो है पर साथ ही मंगलकारी होने के साथ कर्मों को जड़मूल से नष्ट करने वाला है। इस मंत्र का प्रयोग जैनाचार्यों ने सदैव निष्काम भाव से कर्मों की वज्र शृंखलाओं को तोड़ने के लिए ही किया। तंत्रादि की असीम शक्ति से परिचित होते हुए भी सांसारिक सिद्धि के लिए इसका उपयोग नहीं किया। समस्त प्राणी जगत् के प्रति सद्भावना रखने के कारण ही कभी इस मंत्र का दुरुपयोग नहीं किया।

प्रस्तुत ग्रन्थ के दूसरे अधिकार में मानव चरित्र के उत्थानकर्त्ता तीन प्रमुख गुणों का 'रतनत्रय' के अन्तर्गत विशद विवेचन किया गया है। ये गुण हैं **सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान,** और **सम्यक चारित्र**। मानव जीवन का उद्देश्य इन तीन रत्न गुणों का अपने चरित्र में विकास करना ही है। तीनों की सिद्धि मुक्तिदायिनी है। कर्म बन्धनों से मुक्ति भी इन्हीं की उपलब्धि से संभव है। आत्मा को जन्म-जरा-मरण की त्रिविध व्याधियों से छूट कर अविनाशी सुख प्राप्त करने के लिए 'रत्नत्रय' की आराधना और उपासना में संलग्न रहना जरूरी है, यही उसकी अमूल्य निधि है।

वस्तुतः इस ग्रन्थ में जैन धर्म और उसके सिद्धान्तों का विशद विवेचन अत्यन्त सुन्दर और आकर्षक शैली में किया गया है। लोक रुचि के अनुकूल ही अनेक पुराणसम्मत कथानकों के सहयोग से विषय को सुरुचिपूर्ण बनाने का श्रेय इस ग्रन्थ के संपादक जी को है। इसमें स्पष्ट किया गया है कि दर्शन, ज्ञान और चारित्र को सम्पूर्ण और सम्यक् बनाने के लिए मनुष्य को किस प्रकार कठिन साधना और तपश्चर्या का अनुसरण करना पड़ता है। धर्म का मूल सम्यग्दर्शन है जिसके बिना ज्ञान और चारित्र भी पूर्णतया को प्राप्त नहीं कर सकते। यह मोक्ष रूपी महल की पहली सीढ़ी है। जब मनुष्य की आंखों के आगे से मोह-माया का मिथ्या भ्रम का आवरण हट जाता है तो सत्य के आलोक में उसकी दृष्टि सम्यक् होने लगती है। वह हर वस्तु के सच को जानकर अपने को तटस्थ प्रकृति का बनाने का प्रयास करने लगता है। उसे न तो सुख में हर्ष और न दुख में विषाद की अनुभूति होती है। किसी जीव की हिंसा या अहित का भाव उसके मन में नहीं आता वरन् निःस्वार्थ भाव से वह अपनी ही आत्मा के परिष्कार में लगा रहता है। यह समदृष्टि भव-सागर को पार करने में सहायक है। पाप रूपी वृक्ष को काटने वाला तीक्ष्ण कुठार भी यही है। मोह रूपी अंधकार के नष्ट होने पर ही सम्यक् ज्ञान की प्राप्ति होती है और तभी व्यक्ति सद्चरित्र का विकास करता है। पाप एवं भोगविलास से निवृत्ति और आत्मपरिष्कार में प्रवृति ही सम्यक् चारित्र है।

मानव चरित्र की अनमोल निधि स्वरूप इन 'रत्नत्रय' गुणों के विवेचन के अतिरिक्त इस ग्रंथ में २४ तीर्थंकरों के परिचय, धर्मपथ का अनुसरण करने वाले अनेक महापुरुषों और धर्मात्माओं के जीवन संदर्भ दिए गए हैं। ग्रंथ में धर्म के यथार्थ स्वरूप और एक सच्चे साधक के गुण-दोषमय चरित्र की व्याख्या करके जन सामान्य को भी सत्पथ पर चलने की प्रेरणा दी गई है। इस ग्रंथ के प्रणयन का मूल उद्देश्य जैन धर्म का प्रचार करना, जैन तथा जैनेतर लोगों में धर्म प्रभावना बढ़ाना होने के साथ यह भी रहा है कि जैन धर्म विषयक सम्पूर्ण सामग्री प्रस्तुत करने वाला एक सम्यक् ग्रंथ प्रकाशित किया जाये जिसमें जिनवाणी का यथार्थ स्वरूप मिल सके तथा अधिकाधिक लोग इस धर्म के अनुयायी बन कर आत्मलाभ कर सकें।

इस ग्रन्थ को प्रकाश में लाने के लिए महान् सन्त, युगपुरुष, आचार्यरत्न श्री देशभूषण जी महाराज का सम्पूर्ण जैन समाज चिर ऋणी रहेगा। उन्होंने जीवन को जिस कर्मठता, सृजनशीलता से शोध साधना में बिताया है और जैन धर्म के शाश्वत सत्यों को विश्वव्यापी बनाने के लिए जो साहित्य-रत्न जैन संस्कृति को दिए हैं वे अनुपम हैं। अव्यवस्था और विषमताओं के इस युग में आत्मप्रकाश की मशाल लिए जैन धर्म को लोकप्रियता और व्यापकता दिलाने के लिए आचार्य श्री ने जो स्तुत्य प्रयास किए हैं वे अविस्मरणीय रहेंगे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org